काशीपूराधीश्वरी देवी अन्नपूर्णा

श्रीश्रीमाँ सर्वाणी

वाराणसी एक पीठ स्थान है; शिवपत्नी सती का दक्ष यज्ञ में देहत्याग होने के उपरांत जब भगवान विष्णु ने सती देह को खंडित किया तो सती का कर्णभूषण वाराणसी क्षेत्र में पतित हुआ फलतः वाराणसी सतीपीठ में परिणत हुआ। ब्रह्मजामल के आद्यास्तोत्र में उल्लिखित है 'वाराणस्याम् अन्नपूर्णा'; अर्थात्, भगवती 'देवी' कह रही हैं वाराणसी में वे देवी अन्नपूर्णा रूप में प्रतिष्ठित है। फिर तंत्र चुड़ामणि में वर्णित है कि देवी 'विशालाक्षी' वाराणसी की अधिष्ठात्री देवी है। वाराणसी क्षेत्र में गंगानदी उत्तर वाहिनी है। गंगा के बाएं तट पर अवस्थित अर्द्धचन्द्राकृति तीर भूमि, है 'काशी' और इस अविमुक्त काशी का केन्द्रबिन्दु एवं राजधानी हुई वाराणसी, जो वरुणा और असि नदी के संगम पर स्थित एक पौराणिक शहर है।

'पीठस्थल' का तात्पर्य हुआ 'आध्यात्मिक शक्ति का केन्द्रस्थल'। अध्यात्म चेतना के परिप्रेक्ष्य में वाराणसी नित्य जाग्रत शिव-शक्ति का निवास स्थल कहकर प्रसिद्ध है। योगशास्त्र के शिवसंहिता में कथित है, - ''इड़ा ही पिंगला ख्याता वरणासीति ह्योच्चते। वाराणसी तयोर्मध्ये विश्वनाथोह्यत्र भासितः।।'' श्लोक १३५।

– अर्थात्, देहाभ्यंतरस्थ इड़ा नाड़ी वरणा अथवा वरुणा नदी के नाम से एवं पिंगला नाड़ी असि नदी के नाम से अभिहित है। इन नदीद्वय के मध्य में वाराणसी धाम और विश्वनाथ या विश्वेश्वर शिव शोभायमान है। इस वाराणसी पीठस्थान में देवी अन्नपूर्णा और विशालाक्षी विराजित है। इस स्थल में शक्ति के दो रूप प्रतिष्ठित है कारण, सृष्टितत्त्व के योग चेतना में देवी के दो रूप दो तत्त्वों को प्रकाशित करते हैं। देवी अन्नपूर्णा योगतत्त्व में समासीन है और देवी विशालाक्षी सृष्टितत्त्व में विश्वचेतना के महतत्त्व पर आरूढ़ है। सृष्टितत्त्व में देवी विशालाक्षी दुर्गा महाशक्ति स्वरूपिणी; विशालाक्षी का तात्पर्य विशाल अक्षि सम्पन्न ईश्वरी शक्ति से है। आज्ञा चक्रस्थल हुआ कूटस्थ चेतना का स्थान जहाँ कूटस्थ के मध्य त्रिकूटी में विश्व-चेतना एवं विश्वरूप दर्शन की उपलब्धि की जाती है। अतः देवी हुई कूटस्थ-चैतन्यशक्ति और कूटस्थ रूप में विशाल मानस चक्षु के अक्षिस्वरूपा 'विशालाक्षी' ईश्वरी। योगतत्त्व के आधार पर देवी इस स्थान में हो गयी 'अन्नपूर्णा' नित्यानन्दकरी योगानन्दकरी और सर्वानन्दकरी। – ''अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकर प्राणवल्लभे। ज्ञानवैराग्यं सिद्धयर्थं भिक्षां देहि च पार्वति।।''– श्रीश्रीअन्नपूर्णास्तोत्रम्, आदिशंकराचार्य। – देवी अन्नपूर्णा सर्वदा ही अमृतपूर्णा है, इसीलिए वे नित्यानन्दकरी व सदानन्दकरी शिवशंकर की प्राणवल्लभा है। ज्ञान-वैराग्य सिद्धार्थ स्वयं शिव ने भी उनके निकट अमृत परमान्न भिक्षा की याचना की थी। अन्नपूर्णा, शिव की भैरवी शक्ति है, जो समस्त सत्ता की प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग की मनोचेतना की धारा को समतापूर्ण भाव से धारण करने में सक्षम है एवं वे समग्र विश्व के अन्नमय विषय का परिपोषण और रक्षण करती है। अमृतरूपी अन्न ही आत्मसत्ता का श्रेष्ठ परमान्न है। इस अमृत का संधान भोग पथ द्वारा नहीं वरन् योग मार्ग से पाया जाता है। इसीलिए शिव हुए परम योगी, जो देवी अन्नपूर्णा रूपी पार्वती के स्वामी है। इसीलिए देवी ने सिंहासन पर राजसी वेश में उपवेशिता होकर वाम हस्त में सुवर्णमय अन्नपात्र धारण किया था और दाएं हाथ द्वारा सोने के करछुल से अन्नपरिवेशन किया था। देवी क्षुधार्त शिवब्रह्म को अन्न प्रदान करने में लीन थी – यही देवी रूप का ध्यानगम्य सुप्रसिद्ध विग्रह है। त्याग के मार्ग द्वारा ही योगी को देवी अन्नपूर्णा के अमृत-अन्न की प्राप्ति होती है।

योग मार्ग पर योगी साधक को अनाहत से आज्ञा पथ पर परम वैराग्य रूपी त्याग चेतना का जो उर्ध्व आत्मशक्ति का प्रवाह, आज्ञाचक्र में उपनीत करने में समर्थ करता है एवं उसी

स्तर में स्थिति प्रदान कर साधक योगी के अन्नमय कोष, मनोमय कोष, प्राणमय कोष इत्यादि को जो शक्ति परिपुष्ट कर परितृप्ति प्रदान कर योगी को शिवत्त्व के स्तर पर उपनीत कराती है, वह मातृशक्ति ही हुई देवी अन्नपूर्णा। मस्तक के सहस्रार के केन्द्रस्थल से चांद्रीसुधा क्षरण होकर आज्ञाचक्र में सन्निवेशित होती है। योगी खेचरीमुद्रा साधन की सहायता से कपाल कुहर में जिह्वा को प्रविष्ट कर उस चांद्रीसुधा का पान कर परितृप्त होता है। योगी की देह में चांद्रीसुधासम अमृत रस आज्ञा स्थल में कपाल में आकर अवस्थान करता है। फिर, योगी साधक उत्तम प्राणायाम की सहायता से भी आज्ञाचक्र में कुम्भक सिद्ध होकर स्थिति लाभ कर कुलकुण्डलिनी शक्ति को जब आज्ञाचक्र में स्थापित करने में सक्षम होता है, तभी चांद्रीसुधा - ज्योति किरण रस के रूप में योगी की स्थूल जिह्वा पर पतित होकर ललना चक्र की चेतना में योगी की देह की उनचास प्रधान वायु को प्राण के प्रवाह में समतापूर्ण भाव से देह की पुष्टि साधित करने में सहायक होती है। यही घटना है महाशक्ति रूपिणी माँ अन्नपूर्णा का शिवसत्ता को परमान्न प्रदान करना।

जीवत्व से शिवत्व अर्जन के पथ पर योगमार्ग में सृष्टितत्त्व के रहस्य का भेद करने पर देखा जाता है कि 'अन्न ही ब्रह्म' रूप में परिगणित होता है; यथा - तैत्तीरीय उपनिषद् की भृगुवल्ली में कथित है – ''अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्'' – अर्थात् 'अन्न ही ब्रह्म है'। वरुण पुत्र भृगु ने तपस्या द्वारा सर्वप्रथम अनुभव के आधार पर यह पाया कि अन्न ही ब्रह्म है; अन्न के मध्य में ही सृष्टि-स्थिति और लय के तीन ईश्वरीय सत्य के सर्वव्यापी छन्द निहित है। उन्होंने उपलब्धि की – ''अन्नाद्धैव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, अन्नेन जातानि जीवन्ति, अन्नं प्रयन्त्यभिसं विशन्तीति।'' – अन्न के भोजन से जो शुक्र देह में उत्पन्न होता है, मातृ जरायु में यही अन्न जात शुक्र निषिक्त होकर जीवसत्ता का देहरूप घट निर्मित होकर जीव का जन्म होता है। इसीलिए, अन्न सृष्टि शक्ति सम्पन्न; जन्म के पश्चात् अन्न भोजन की भित्ति में ही जीवन धारण करके रहता है, यही कारण है कि अन्न को पालन शक्ति सम्पन्न बोला जाता है; फिर, मृत्यु के पश्चात् जीव की अभुक्त आत्मा पुनर्जन्म के लिए भावी माता-पिता के आश्रय के उद्देश्य से खाद्य शस्यादि के आकार में अणु के भीतर अर्थात् अन्नमय कोष के मध्य ही पुनः प्रविष्ट होती है एवं अन्न में मिलकर नूतन अन्नमय कोष के मध्य नवीन घटरूप देह प्राप्त कर आत्मसत्ता स्थूल देह लाभ करती है। अतएव इस क्षेत्र में अणु के मध्य में लय का भाव भी प्रस्फूटित हो रहा है। इस प्रकार स्थूल अन्नमय आत्मसत्ता के विषय में ज्ञान के सोपान का अवलम्बन कर क्रमशः प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोष में उपनीत होकर आत्मज्ञान प्राप्त कर अवशेष में भृगुऋषि ने आनन्दमय कोष में आनन्द स्वरूप आत्मा की भूमि में अधिरोहण कर 'आनन्द ही ब्रह्म' है की उपलब्धि की थी; जीव की आनन्द से ही उत्पत्ति हुई है, आनन्द के प्रसाद से ही उसका अस्तित्व है एवं अन्त में आनन्द में ही उसका लय होगा। जीव जीवन के विवर्तन की इस क्रमानुयायी धारा में ब्रह्म से अन्न को पृथक नहीं समझा जा सकता है। कारण, अन्न ही प्राण एवं प्राण ही ब्रह्म। अतएव जीव एवं शिव उभय की ही 'माँ' हुई अन्न ब्रह्मरूपिणी देवी अन्नपूर्णा शक्तिमयी। साधक रामप्रसाद के संगीत में है -''तुमि अन्नपूर्णा माँ, शमशाने श्यामा, वैकुन्ठेते रमा तुमि कैलाशे उमा।'' – अर्थात् देवी अन्नदा अन्नपूर्णा ही हुई एक कला में अखण्ड आदि शक्ति की सृष्टि-स्थिति-लय कारिणी शक्ति का विशेष एक स्वरूप, जो विश्वेश्वर रूपी 'अविमुक्त' शिवलिंग की चिन्मय विश्वनाथ की चिन्मयी विश्वेश्वरी। ये हैं अन्नब्रह्मरूपिणी रूप में समस्त जीवों की मोक्षदायिनी एवं शिव की सर्वप्रकारेण अभाव मोचनकारिणी।

–हिन्दी अनुवाद : मातृचरणाश्रिता श्रीमती ज्योति पारेख